P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-6* February- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

# वैश्वीकरण और भारतीय अर्थव्यवस्था

**सारांश**

भूमण्डलीकरण से आशय है, देश की अर्थव्यवस्था को विश्व की अर्थव्यवस्था के साथ एकीकृत (Integrate) करना। जब किसी अर्थव्यवस्था का विश्व के अन्य देशों के साथ कोई आर्थिक सबंध नहीं हों तो उसे हम बंद अर्थव्यवस्था (Closed Economy) कहते है, और जब किसी अर्थव्यवस्था का विश्व के अन्य देशों के साथ आर्थिक तथा व्यापारिक सबंध हो तो ऐसी अर्थव्यवस्था को खुली अर्थव्यवस्था कहते है। जब किसी भी अर्थव्यवस्था का विश्व की सभी अर्थव्यवस्थाओं के लिये पूर्णतः खोलना, जिससे व्यापार, विदेशी निवेश, दीर्धकालीन तथा अल्पकालीन पूँजी प्रवाह टेक्नालॉजी के प्रवाह, श्रम की गतिशीलता आदि पर किसी प्रकार का प्रतिबद्ध नहीं हो तो इसे हम वैश्वीकरण कहते है। प्रोफेसर जगदीश भगवती "आर्थिक भूमण्डलीकरण से आशय राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं का व्यापार निगमों था बहुउद्देशीय निगमों के द्वारा प्रत्यक्ष विदेशी अल्पकालीन पूँजी ग्रावाह श्रमिकों तथा मानवता के अन्तर्गष्ट्रीय प्रवाह तथा टेक्नालॉजी के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के साथ जोड़ना है।

**वीरेन्द्र मटसेनियां**
सहायक प्राध्यापक,
अर्थशास्त्र विभाग,
डॉ हरीसिंह गौर
विश्वविद्यालय,
सगर, म.प्र., भारत

**उतसव आनन्द**
सहायक प्राध्यापक,
अर्थशास्त्र विभाग,
डॉ हरीसिंह गौर
विश्वविद्यालय,
सगर, म.प्र., भारत

**मुख्य शब्द :** वैश्वीकरण, भूमण्डलीकरण, भारतीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था।

**प्रस्तावना**

वैश्वीकरण की पूरी अवधारणा इस परिकल्पना पर आधारित है, कि यदि विश्व के देशों के बीच संसाधनों तथा टेक्नालॉजी का स्वंतत्र गतिशीलन हो तथा इसके साथ ही वस्तुओं तथा सेवाओं के व्यापार पर किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं हो तो सभी देश उन वस्तुओं तथा सेवाओं के उत्पादन में विशिष्टीकरण प्राप्त करेंगें, जिनमें उनकी सापेक्षिक कुशलता सर्वाधिक स्पष्ट होगी और ऐसी स्थिति में सभी देशों को उत्तम गुणवत्ता की वस्तुएं न्यूनतम लागत पर प्राप्त होगी, और इस प्रक्रिया में न केवल सभी देशों को लाभ होगा, बल्कि साथ ही विश्व स्तर पर संसाधनों का बंटवार कुशलता होगा तथा इसके साथ ही विश्व उत्पादन भी अधिकतम होगा। इस प्रकार वैश्वीकरण का अर्थ है, कि –

1. विश्व के किसी भी देश में वस्तुओं तथा सेवाओं का उत्पादन साम्भवित न्यूनतम लागत पर प्राप्त करना।
2. प्रत्येक स्थान पर संसाधनों तथा प्रबन्धीय क्षमता का कुशलतम प्रयोग।
3. पूरे विश्व को एक बाजार के रूप में स्थिापित करना।

ऐसी स्थिती के सभी देशें के बीच वस्तुओं तथा सेवाओं का स्वतंत्र प्रवाह होगा, और सभी प्रकार के व्यावापारिक प्रतिबंध सामाप्त हो जाएंगे। पूरे विश्व एक अप्रतिबन्धित रोजगार के रूप में परिवर्तित हो जायेगा। अर्थव्यवस्था विश्व अर्थव्यवस्था के साथ जुड़ जाती है। यहॉ सभी देशों के बीच होने वाली प्रतियोगिता कुशलता को बढ़ाने वाली सिद्ध होती है। क्योकि प्रत्येक देश उन्नत तकनीक का प्रयोग करने लगता है।

वैश्वीकरण (Globalization) की चर्चा सबसे पहले प्रोफेसर जॉन नैशविट (Jonha Naisbitt) ने अपनी पुस्तक "New directions transforming our lines" में की थी। वैश्वीकरण से सैद्धांतिक रूप से तीन धारणायें सबंधित है। उदारीकरण (Liberalization) बाजारीकरण (Marketization) तथा निजीकरण (Privationzation) है।

उदारीकरण के होने से प्रत्येक देश की सरकारें घरेलू तथा विदेशी बाजार के लिये लाइसेंसिंग, निवश सीमा, विदेशी नियंत्रण, आरक्षित उद्योग जैसे प्रतिबंधों को हटा लेती है। इससे देश में विदेशी पूँजी तथा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की स्थापना होने लगती है। देश की करेन्सी चालू खाते तथा पूँजी खाते के लिये पूर्णरूप से परिवर्तनीय हो जाती है। उदारीकरण, निजीकरण की आवश्यक है, इसलिए औद्योगिक क्षेत्र में निजी क्षेत्र की भागेदारी को बढ़ाया जाता है। इसके लिए राष्ट्रीकरण की प्रक्रिया को रोकना तथा विनिवेशीकरण की प्रक्रिया को रोकना तथा विनिवेशीकरण की प्रक्रिया को सम्पन्न किया जाता है। जिससे निजी

क्षेत्र अपने लाभ के उद्देश्य से उत्पादन को बढ़ाता है। जिससे आर्थिक विकास की गति ओर तेज होती हे।

वैश्वीकरण को प्राप्त करने के लिए उदारीकरण को बढ़ाया जाता है। उदारीकरण से सरकारी हस्तक्षेप, आर्थिक विकास की प्रक्रिया में राज्य की भूमिका या संसाधनों के बंटवारे तथा आर्थिक विकास की रणनीति को तय करने में सरकार की भूमिका में कमी आती है।

**शोध पत्र के उद्देश्य**

1. देश की अर्थव्यवस्था में प्रतियोगिता की क्षमता पैदा करना।
2. देश के संसाधनों को ठीक ढंग से प्रयोग करना।
3. उन्नत तकनीकी का प्रयोग करना।
4. देश की अर्थव्यवस्था को आत्मनिर्भर करने के लिए सुझाव देने।

**वैश्वीकरण के पक्ष में तर्क**

1. देश का आर्थिक विकास, पूँजी की मात्रा पर निर्भर करता है, विकासशील देशों में पूँजी का अभाव होता है। लेकिन वैश्वीकरण से पूँजी का प्रवाह बढ़ता इसके स्टॉक में वृद्धि होती है।
2. वैश्वीकरण से विकासशील देशों को आघतन तकनीक, ज्ञान तथा शोध तथा विकास पर खर्च किये बिना उसका लाभ मिल जाता है।
3. विदेशी प्रतियोगिता होने से देशी उद्योग में एक स्वस्थ्य प्रतियोगिता की परस्पर निर्मित होती है। इससे घरेलू संसाधनों का इष्टतम प्रयोग होता है।
4. विदेशी बाजार में पहुँच बढ़ती है। जिससे बाजार का विस्तार होता है। इससे उत्पादन तथा निर्यात में वृद्धि होती है। प्रोफेसर जगदीश भगवती जी कहते है, कि वैश्वीकरण से बहिर्मुखी अर्थव्यवस्था (outward oriented Economies) का विकास होता है, इसी प्रकार प्रोफेसर सेम्युलसन कहते है, कि इससे अर्थव्यवस्था विशिष्टीकरण में सफल होती है, और अच्छा निष्पादन करती है।
5. वैश्वीकरण से अर्थव्यवस्था को बड़े पैमाने की मितव्यतायें प्राप्त होती है। जिससे बाजार का विस्तार होता है। ओर व्यापार भी बढ़ता है। वैश्वीकरण का पक्ष लेते हुए प्रोफेसर जगदीश भगवती कहते है, कि इसके अभाव से घेरलू एकाधिकार को जन्म मिलता है, इसलिए हमें अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के माध्यम से स्वस्थ्य प्रतियोगिता को बढ़ाना चाहिए।

गरीबी तथा विषमता में कमी आना प्रोफेसर जगदीश भगवती कहते हे, जब से विश्व के देशों ने वैश्वीकरण की प्रक्रिया को अपनाया है, तब से गरीबी तथा वितरण की असमानता में कमी आयी है। विश्व बैंक के अनुमान पिछले दो दशकों में चीन की संवृद्धि पर 10 प्रतिशत तथा भारत की सम्वृद्धि दर कम रही है। एशियन विकास बैक की रिपोर्ट के अनुसार चीन में गरीबी 1978 में 28 प्रतिशत थी। जो 1998 में घटकर 9 प्रतिशत रह गयी। जवकि भारत में 1978 में गरीबी 51 प्रतिशत थी। जो 1999 में घटकर 26 प्रतिशत रह गयी इन सब अध्ययनों से यह कहा जा सकता है। कि वैश्वीकरण ने गरीबी तथा आर्थिक विषमता को कम किया है।

इस प्रकार यह आसानी से कहा जा सकता है, कि वैश्वीकरण आर्थिक विकास का इंजिन है, तकनीकी प्रगति का साधन, है, प्रतियोगिताजन्य सभी लाभों का सृजक तथा अर्थव्यवस्था में निवेश, रोजगार तथा उत्पादन में वृद्धि लाने का माध्यम है।

**वैश्वीकरण विरूद्ध तर्क**

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष ने "सोशल डाइमेन्सन ऑफ ग्लोबलाइजेशन" के सबंध में एक आयोग नियुक्त किया उस आयोग ने मत व्यक्त किया कि वैश्वीकरण की चालू प्रक्रिया में बदलाव होना चाहिए। क्योकि इससे कुछ ही लोग, लाभान्वित ही रहे है, तथा बहुत अधिक लोक इसकी प्रक्रिया तथा प्रारूप के निर्धारण में दखल नहीं रखते है। वैश्वीकरण से विदेशी पूँजी देश की अर्थव्यवस्था में निवेश को बढ़ाती है, लेकिन इससे यह खतरा है, कि विदेशी पूँजी के बारे में यह निश्चित नहीं होता है, कि विदेशी पूँजी अर्थव्यवस्था से कब बहार हो जाये, देश के संसाधन तथा साधनों का लाभ कमाने के लिये बहार के देशों में जाना।

1. देशी उद्योग या विकासशील देशों का औद्योगिक ढॉचा कमजोर होता है, जवकि विकसित देशों का उन्नत उनके अन्दर स्वस्थ्य प्रतियोगिता का जन्म नहीं हो पाता है, जिससे विकाससशील देशों का एक तरह से शोषण ही हो रहा है।
2. वैश्वीकरण से घरेलू बाजार में विदेशी उपभोक्ता वस्तुयें आ जाती है। विदेशी वस्तुओं के प्रति आकर्षण, तथा प्रदार्शन प्रभाव के कारण देश के उत्पादन को नुकसान पहुँचता है।
3. वैश्वीकरण से सार्वजनिक तथा मेरिट वस्तुओं की आपूर्ति सामाजिक न्याय की अवधारणा पर लागू नहीं होती है।
4. विश्व स्तर पर समस्त अर्थव्यवस्थायें उपभोक्तावाद का केन्द्र बन कर रह जाती है। इससे विलासिता की वस्तुओं को बढ़ावा मिला है, और छोटे उपभोक्ताओं को इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ती है।
5. वैश्वीकण से पूँजीगहन तकनीकी को बढ़ावा मिलता है, जिससे अर्थव्यवस्था का रोजगारमूलक ढांचा अत्यन्त ही कमजोर होता जाता है, इससे रोजगार तथा सामाजिक न्याय की स्थापना एक दिवास्वप्न बनकर रह जाती है।

विश्व बैंक ने ग्लोवल एकोनोमिक प्रॉसपेक्टक 2007 में कहा कि वर्तमान वैश्वीकरण की प्रक्रिया को अनियंत्रित या स्वंतत्र छोड़ दिया जाये तो इसके जबरदस्त प्रतिकूल प्रभाव दृष्टिगोचर होगें। इससे आर्थिक असन्तुलन तथा पर्यावणीय दबाब आ सकते है, जिससे आर्थिक विषमता, श्रम बाजार में दबाब तथा प्रदूषण युक्त प्लैनेट का खतरा बन सकता है।

**भारत का दृष्टिकोण**

भारत में 1950–51 से चली आ रही आर्थिक नीति तथा उससे सबंधित कार्यनीतियों में क्रांतिकारी रूप से परिवर्तन की बात 1991 में शुरू हुयी इसको क्रियान्वित करने के लिए औद्योगिक नीति, राजकोषीय नीति, मौद्रिक नीति तथा व्यापारिक नीति में व्यापाक परिर्वतन किये गये। इस नयी नीति के प्रयोग के श्रेय तत्कालीन प्रधानमत्री श्री

नरसिंहराव तथा वित्तमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह जी को जाता है। बहुत से लोग इसे राव–मनमोहन विकास रणनीति (Rao Manmohan Development strategy) कहते है।

भारत को 1980–90 के दशक में आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा, भुगतान संतुलन की स्थिति विपरीत होने लगी, साथ ही साथ आयात बढ़ने लगे, 1990 में खाडी सकंट से भी आर्थिक संकट और गहरा गया, भारत की अर्थव्यवस्था अनिवासी भारतियों पर निर्भर हेने लगीं विदेशी निवेश की जरूरत भी बढ़ने लगी, इसके साथ ही भारत की साख मान (Credit Rating) नीचे गिरने लगी।

राजनीतिक अस्थिरता के चलते विदेशी निवेशक अपनी पूँजी निकालने लगे, तब भारत ने अपने घाटे की पूर्ति के लिये अन्तराष्ट्रीय मुद्रा कोष से 1980 मिलियन डोलर का ऋण लिया, आयात को बंद करना पड़ा, विदेशी बैंकों मे भारत को स्वर्ण रखना पड़ा इसके बाद भी भारत आर्थिक संकट से नहीं उभर सका, भारत के विदेशी मुद्रा भण्डार, एक मिलियन डोलर के बराबर रह गये जो दो सप्ताह से अधिक के आयातों के भुगतान के लिये भी पर्याप्त नही थे। राजकोषीय घाटा (GDP) के 10 प्रतिशत तथा चालू खाते में घाटा (GDP) के 3 प्रतिशत तक पहुँच गया। मुद्रा स्फीति की दर 12 प्रतिशत से अधिक हो गई।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है, कि 1991 का आर्थिक सकंट किसी अल्पकालीन कारकों का परिणाम नहीं था, अर्थव्यवस्था में अपनाई गयी दीर्धकाल से दोषपूर्ण आर्थिक नीतियों का संचयी प्रभाव का परिणाम ही था।

इस संकट के पीछे जाकर देखें तो इसके बीज 1979–81 के बीच पैदा हुए तेल संकट से ही पड़ गये थे।, जब विश्व में तेल के मूल्य दो–गुने हो गये थे। इससे भारत की अर्थव्यवस्था पर गहरा विपरीत प्रभाव पड़ने लगा, क्योकि जब 1978 में चालू खाते का घाटा न के बाराबर था, वहीं 1981 में बढकर (GDP) के बराबर हो गया। बाद के वर्षो में भी चालू खाते के घाटे में वृद्धि होती रही। वहीं भुगतान संतुलन भी 1991 की अवधि में अधिक प्रतिकूल हुआ ओर विदेशी विनमय कोष भी अपने न्यूनतम स्तर पर जा पहुँचा।

इस व्यवस्था के लिए राजकोषीय व्यवस्था भी जिम्मेदार रही, क्योकि 1980 के दशक में गैर–विकासात्मक व्यय अधिक किये गये, जिससे सभी प्रकार के घाटे बढ़े, बजट घाटा जो 1981–82 में (GDP) के 0.2 प्रतिशत था जो बढ़कर 1990–91 3.5 प्रतिशत हो गया, राजकोषीय घाटा 1984–85 में 7.5 प्रतिशत था, जो 1990–91 में बढ़कर (GDP) के 8.4 प्रतिशत हो गया।

जिससे मुद्रा पूर्ति में वृद्धि हुयी इसके फलस्वरूप मुद्रास्फीति में भी वृद्धि हुयी, इससे निर्यात भी कम हुये, (क्योंकि वस्तुओं की कीमतें बढ़ गयीं।) इस प्रकार का राजकोषीय घाटा अपोषणीय होता है, जो देश की अर्थव्यवस्था को ऋणजाल की ओर ले जाता है।

इन सब विपरीत स्थितियों से बचने के लिये भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व बैंक से सहायता लेना ही उचित समझा, और भारत ने 1980 मिलियन डोलर के ऋण प्राप्त किये। हमें सहायता तो मिली लेकिन कुछ शर्तों के तहत्–कि भारत को स्थायित्व एवं संरचात्मक समायोजन कार्यक्रम लागू करने हेागें। इसके तहत भारत को राजकोषीय घाटा तथा मुद्रा पूर्ति को कम करना था, घरेलू क्षेत्र की नीतियों में उदारीकरण के तहत् उत्पादन, निवेश तथा कीमत पर प्रतिबंध कम करने होगें, तथा विदेशी स्तर पर वस्तुओं, सेवाओं, तकनिकी तथा पूँजी प्रवाह पर लगें प्रतिबंध भी हटाने होगे।

**निष्कर्ष**

इन सब समझौतों को मानते हुये भारत सरकार ने अपने आर्थिक सकंट को काबू में करने के लिये कदम उठाये और इसी वैश्वीकरण की व्यवस्था के चलते भारत की अर्थव्यवस्था विकास की मुख्य धारा में ही नहीं बल्कि आज विश्व की चौथी बडी अर्थव्यवस्था बनकर उभरी है, और विश्व अर्थव्यवस्था की आखों के लिये तिनका बनती जा रही हैं। लेकिन हमें आज वैश्वीकरण के अन्धें अनुकरण की आवश्यकता नहीं वल्कि सतर्ककतापूर्ण इसके प्रयोग की वेहद् आवश्यकता है। जिससे भारतीय अर्थव्यवस्था को ऊँचे लाभ प्राप्त हो सकें।

**सदंर्भ ग्रंथ सूची**

*दत्त–सुन्दर भारतीय अर्थव्यवस्था एस. चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ल 2011*

*योजना प्रकाशन विभाग भारत सरकार, नई दिल्ली गई 2005*

*मिश्रा एण्ड पुरी भारत की अर्थव्यवस्था हिमालय प्रकाशन, नई दिल्ली 2011*

*कुलश्रेष्ठ आर.एस औद्यौगिक अर्थव्यवस्था साहित्य भवन, प्रकाशन, आगरा 2003*

*अग्रवाल ए.एन भारतीय अर्थव्यवस्था न्यू.एज. इन्टरनेशनल (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली 2008*